बंगलौर (भkjr)
अगस्त ०३, २००१

सन्देश संख्या ३८

क्रियायोगी

मन की गतिविधियों के अनुगमन से प्रतिदिन कुछ न कुछ संग्रहित होता है। जीवन की क्रिया (क्रियायोग) के अनुसरण से प्रतिदिन कुछ न कुछ छूटता जाता है।

जब तक शुद्ध क्रिया पुष्पित होना शुरू न हो जाए तब तक कम से कमतर गतिविधियों में रहें। जब कुछ नहीं किया जाता है तब वस्तुतः सब कुछ स्वतः होने लगता है और कुछ भी अकृत नहीं रहता। घटनाओं को स्वाभाविक ढंग से घटित होने दिया जाय, यही जीवन का संगीत है। इसमें मन के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। कृष्ण एवं क्रियायोगी 'निर्मन' होते हैं। क्रियायोगी के पास सदैव यथेष्ट रहेगा क्योंकि वह जानता है कि जो है वही पर्याप्त (यथेष्ट) है। वह जानता है कि 'और' का दौर ही सबसे बड़ा अभिशाप है। असंतोष ही सबसे बड़ा पाप है। संग्रही प्रवृत्ति से बढ़कर कोई दुर्भाग्य नहीं है।

क्रियायोगी अच्छों के साथ–साथ बुरों के लिए भी अच्छा है क्योंकि 'अच्छा होना' सद्‌गुण है। वह उनलोगों पर विश्वास करता है जो विश्वासयोग्य हैं साथ ही उनपर भी विश्वास करता है जो विश्वासयोग्य नहीं हैं क्योंकि 'विश्वास करना' सद्‌गुण है। संसार को एक क्रियायोगी का यह स्वभाव दुविधायुक्त एवं विरोधाभासी प्रतीत हो सकता है। वह एक अबोध बच्चे की तरह व्यवहार करता है। वह शर्मीला, संकोची होता है परन्तु आवश्यकता पड़ने पर कठोर भी हो सकता है। तब भी लोग उसे प्यार करते हैं और उसकी सीधी सच्ची बातों को सुनना पसन्द करते हैं। क्रियायोगी एक नवजात शिशु है। वह न तो पुरूष है, न स्त्री। वह पूर्ण है, वह समर्थ है। उसकी दिन भर की किलकारी, किल्लोल, चीख–पुकार में किसी प्रकार की शता नहीं रहती है। उसका शरीर और मन कोमल होता है किन्तु उसकी पकड़ मजबूत होती है। वह थकना नहीं जानता है। वह धरा की धूल में लिपटा रहता है, फिर भी वह मित्र और शत्रु, लाभ और हानि तथा मान और अपमान के प्रति उदासीन चरम आनन्द की अवस्था में रहता है।

क्रियायोगी सम्पूर्ण विश्व में निर्भय होकर विचरण करता है। गैंडा सदृश मनुष्यों को उसके शरीर में अपनी सींग घोंपने का कोई स्थान नहीं मिल पाता है। क्रूर शेर सदृश मनुष्य उस पर अपना पंजा मारने का कोई स्थान नहीं पाते हैं। शस्त्रधारी मनुष्य उसके शरीर में अपनी गोलियों से छेदने योग्य स्थान नहीं पाते हैं। ऐसा क्यों? क्योंकि क्रियायोगी शून्य तथा शाश्वत है। मृत्यु के प्रवेश हेतु उसके शरीर में कोई स्थान नहीं है क्योंकि उसका स्वाध्याय और तापस बगैर किसी दावे के सृजन एवं बिना हस्तक्षेप के पथ प्रदर्शन करते हुए उसे ईश्वर प्रणिधान की ओर प्रवृत्त करते हैं। यही मूल एवं प्रमुख सद्‌गुण है। पूर्ण के स्पर्श को खोये बगैर उसके सभी खण्डों को जानना तथा उसका उपयेाग करना ही क्रियायोग है।

क्रियायोगी बनें। बिना किसी चाहत के इस ब्रह्माण्ड के स्वामी बनें। तीक्ष्ण बनें किन्तु काटें नहीं। मर्मस्पर्शी बनें किन्तु मर्माहत न करें। स्पष्टवादी बनें किन्तु असंयमित न हों। प्रकाशवान बनें किन्तु इतना भी नहीं कि देखने वाले की इससे आँखें चौंधिया जायें। क्रियायोग मनुष्य की उत्तमता का खजाना है। बुरे व्यक्ति के लिए यह एक अस्थायी शरण स्थली मात्र है। ऐसे व्यक्ति किसी समय किसी भी बहाने क्रियायोग छोड़ देते हैं।

दूसरों को जानना ज्ञान है। अपने को जानना प्रज्ञा है। दूसरों पर प्रभुत्व स्थापित करने के लिए बाह्य बल की आवश्यकता होती है परन्तु अपने पर स्वामित्व तो स्वतःस्फूर्त ऊर्जा से ही संभव हो सकता है। वह सम्पन्न है जो जानता है कि उसके पास पर्याप्त (यथेष्ट) है। वह विपन्न है जो सदैव चाहता रहता है। वह शक्तिशाली है जिसमें अध्यवसाय है। वही टिक सकता है जो स्थिर है।

क्रियायोगी का जीवन शाश्वत है क्योंकि वे बिना नष्ट हुए हर पल मरने की कला जानते हैं।

ॐ क्रियायोगी ॐ